ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

भारतीय संस्कृति और एकात्म मानवदर्शन

शोधार्थी,
सन्नी शुक्ला,
दीन दयाल उपाध्याय पीठ,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
Email: shuklaabvp@gmail.com,mob-9418553223

सारांश

भारतीय जनता पार्टी की स्थापना काल से ही पंडित दीन दयाल उपाध्याय संगठन के वैचारिक मार्गदर्शक और नैतिक प्रेरणास्त्रोत रहे हैं। उनहोंने 'एकात्म मानव दर्शन' जैसी प्रगतिशील विचारधारा से दुनिया का परिचय करवाया। उनका दर्शन पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों की सशक्त समालोचना है। उनका वैचारिक दर्शन मानव मात्र की अवश्यकताओं के अनुरूप जीवन दर्शन है। वे उस परंपरा के वाहक थे, जो भारत के नवनिर्माण की बजाए भारत के पुनःर्निमाण की बात करते हैं। उनकी विचारधारा का मुख्य पहलु एकात्म मानव दर्शन ही था। जिस समय पूरा विश्व पूंजीवाद और साम्यवाद की अच्छाई और बुराई की बहस में उलझा हुआ था, उसी वक्त पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने इन दोनों विचारधाराओं को नकारते हुए 'एकात्म मानव दर्शन' की अवधारणा प्रस्तुत की। भारतीय संस्कृति के विचार और दर्शन की ही उपज एकात्म मानव दर्शन है। पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने कभी भी इस बात का दावा नहीं किया कि उन्होंने दुनिया के सामने कोई नया विचार दर्शन प्रस्तुत किया है। वे बार–बार कहते रहे कि 'एकात्म मानव दर्शन' के जरिए वे भारत की सनातन संस्कृति की ही बात कर रहे हैं। भारतीय संस्कृति के विभिन्न आयामों का कुल जोड़ 'एकात्म मानव दर्शन' है। सनातन धर्म के आईने के रूप में 'एकात्म मानव दर्शन' को देखा जा सकता है। भारतीय संस्कृति की विशिष्टताओं, अध्यात्म, कर्मशीलता, प्रकृति से एकात्मता, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र और विविधता को एकरूपता में पिरोने वाला सूत्र 'एकात्म मानव दर्शन' ही है। दीन दयाल उपाध्याय ने एकात्म मानव दर्शन का विचार हम सभी के सम्मुख रखा, वह वस्तुतः नया विचार नहीं था। भारतीय ज्ञान परंपरा में युगों–युगों से जो ज्ञान चला आ रहा था जिसको हम कालांतर में परातंत्र के कारण विश्मित कर बैठे थे, उसे पुनः देश–काल–परिस्थितियों के अनुकूल बनाकर हमारे सम्मुख पंडित दीन दयाल उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत किया गया। 'एकात्म मानव दर्शन' के नाम पर उपाध्याय उन्हीं बातों को कह रहे हैं जो भारत में 'धर्म' के नाम पर कही गई हैं। 21 से 25 अप्रैल, 1965 को मुंबई में भारतीय जनसंघ द्वारा एक भाषणमाला संपन्न करवाई गई, जिसमें उन्होंने विस्तारपूर्वक अपने चार व्याख्यानों के माध्यम से विस्तारपूर्वक 'एकात्म मानव दर्शन' का स्पष्टीकरण किया था। लेकिन इसके पीछे भी एक पूरी प्रक्रिया है। भारतीय जनसंघ का ग्वालियर में प्रशिक्षण वर्ग जो 11 से 15 अगस्त, 1964 तक चला और उस प्रशिक्षण वर्ग में कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए जो सिद्धांत और नीति, प्रलेख प्रस्तुत किया गया था, उसी वक्तव्य में पहली बार 'एकात्म मानव दर्शन' की प्रतिष्ठापना हुई।

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

प्रस्तावना, उद्देश्य व समीक्षा : एक आदर्श राष्ट्र की स्थापना और उस राष्ट्र का आधार उसकी अपनी संस्कृति होती है। संस्कृति ही है जो समस्त समाज को आपस में जोड़ के रखती है। वर्तमान समय में अगर हम विचार करें तो भारतीय संस्कृति को आधार मानकर पश्चिम में भी काफी शोध के पश्चात भारतीय जीवन दर्शन व संस्कृति को अमल में लाया जा रहा है। भारतीय संस्कृति की सबसे प्रमुख विशेषता भी यही है कि इसमें जीवन का संपूर्ण विचार किया जाता है। त्याग, सेवा, सहिष्णुता, कर्म, पुरूषार्थ एवं पराक्रम ही भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं। इस बात को सार्थक करते हुए कवि मुहम्मद इकवाल ने कहा है :

'यूनान, मिश्र, रोम सब मिट गए जहां से,
है, बाकि अब तक नामओ निशां हमारा,
कुछ बात है कि हस्ती, मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन, दौर ए जहां हमारा'।[1]

सदियों तक भारत गुलामी की जंजीरों में जकड़े रहने के पश्चात वर्तमान समय में एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभर कर आया है। अगर हम इसके कारणों पर विचार करें तो हमें समझ आएगा कि भारतीय संस्कृति ही एक राष्ट्र के रूप में आज तक संजोए रखने वाली शक्ति है। संस्कृति कोई अस्थाई भाव नहीं अपितु वह भाव है, जो राष्ट्रीय एकता को उत्पन्न करता है। परंपराएं जो राम, श्री कृष्ण, हरिशचंद्र, व्यास, भगवान बुद्ध और महावीर आदि महापुरूषों के काल से चली आ रही हैं, वह सभी हिंदू संस्कृति से उत्पन्न हुई हैं। वह कौन सी वस्तु है जिसके कारण हम कहते हैं कि हिंदू संस्कृति जिंदा है, इस पर अगर हम विचार करेंगे तो पाएंगे कि वो हमारी पुरातन सभ्यता एवं संस्कृति ही है, जिसके कारण हम आज भी जिंदा हैं और जिसे प्राचीन काल की परिभाषा में 'चिति' भी कहा जाता है और 'चिति' किसी भी राष्ट्र की आत्मा होती है।'[2] संस्कृति हमें एकात्मता का पाठ पढ़ाती है और पंडित दीन दयाल उपाध्याय का 'एकात्म मानवदर्शन' भारतीय संस्कृति पर ही आधारित है।

स्वतंत्रता पश्चात भारतीय विचार का महत्व

15 अगस्त को अंग्रेज भारत छोड़कर चले गए पर जाते–जाते हमारे राष्ट्रीय भाव व जीवन में विष घोल गए। उन्होंने हमें शारीरिक तथा मानसिक दोनों रूप से दासता की जंजीरों में जकड़े रखा। उसका प्रभाव आज भी देखने को मिलता है। 15 अगस्त 1947 को भारत के वीरों के द्वारा एक मोर्चा तो जीत लिया गया, पर अब भारत के सामने सबसे बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न यह खड़ा हो चुका था कि देश किस दिशा में आगे बढ़ाया जाए। देश की दिशा के संबंध में विचार करने वाले विचारकों में भी वैचारिक मतभेद सपष्ट देखे गए थे। एक मत के अनुसार हजारों वर्षों तक पराधीन रहने पर जो प्रगति की दिशा जहां रूक गई थी वहीं से आगे बढ़ना और दूसरे मत के अनुसार पश्चिमी विचारधारा को लेकर ही आगे

[1] एकात्मदर्शन दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली, अध्याय–1, राष्ट्रवाद की सही कल्पना
[2] राष्ट्र धर्म (अंक, 3–4) कार्तिक पूर्णिमा, 2004 (दिसंबर–जनवरी, 1947–1948)

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

बढ़ने का प्रयास करना चाहिए। यदि विचार करें दोनों ही गलत दिशा में आगे बढ़ने की काशिश में लगे हुए थे। अगर यूं कहें कि जहां हम रूक गए थे वहीं लौटकर जाएं और वहीं से अपना आगे का सफर शूरू करें तो यह भी बुद्धिमता नहीं होगी और यूं कहें कि अपनी संस्कृति को भूलकर किसी दूसरे राष्ट्र की संस्कृति को आधार बनाकर अपनें राष्ट्र का पुर्ननिर्माण करें तो यह भी मुर्खता होगी। हमें तो अपनी संस्कृति को ही आधार बनाना होगा। पुराना छूट नहीं सकता और बाहर वालों की जो ग्रहण करने योग्य है उसे देशानुकूल अपनाने में कोई गुरेज भी नहीं होना चाहिए। 'एकात्म मानव दर्शन' भारतीय संस्कृति से निकला हुआ विचार है । दीन दयाल जी मानते थे कि हमें अपने देश की संस्कृति तथा इतिहास से सीखकर अपने देश एवं दुनिया के हिसाब से अपने विचारों का विकास करना चाहिए। भारतीय संस्कृति और ऋषि परंपरा को अपनाकर संपूर्ण जीवन के रचनात्मक पक्ष को समझने का मार्ग दिखाई देता है। भारतीय संस्कृति की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि भारतीय परंपरा 'प्रकृति' को 'माता' का दर्जा देती है। 'प्रकृति' को प्रदूषित करना पाप है। यह सृष्टि केवल व्यक्ति और समाज से ही नहीं बनती, मानव को प्रकृति के साथ समुचित व्यवहार करना सीखना चाहिए।

संस्कृति एकात्मता का प्रतीक

भारतीय संस्कृति को समझने का प्रयास जब हम करेंगे तो हमारे समक्ष आएगा कि किसी भी समाज की संस्कृति उस भाव को कहेंगे, जिसके कारण वहां के जन–समुदाय में जन–भावना रह सके। जिसके कारण समाज एकत्व का अनुभव कर सकता है। पंडित जी के अनुसार, 'भारतीय संस्कृति एकात्मता का प्रतीक है।'[3] यह एक ऐसी भावना समाज के बीच लेकर आती है, जिससे कि समस्त समाज एकता को महसूस करे। जिस भाव के कारण पृथकता उत्पन्न हो, विभेद उत्पन्न हो और ईर्ष्या, द्वेष बढ़ जाए, वह संस्कृति नहीं असांस्कृतिक भाव है। सांस्कृतिक भाव वही है जो एकता और साथ–साथ चेतना उत्पन्न करने वाला हो। अगर हमें भारतीय संस्कृति को सही मायने में समझना है तो महाभारत में श्री कृष्ण की भूमिका, रामायण में श्रीराम की भूमिका, सम्राट चंद्रगुप्त के राज्य, आचार्य चाणक्य की नीतियों, छत्रपति शिवाजी के एकछत्र राज्य का ज्ञान, स्वामी शंकराचार्य का हिंदू धर्म तथा राष्ट्रीय एकात्मता का भाव, स्वामी विवेकानंद के विचारों को समझना बहुत जरूरी है। रामायण और महाभारत हमारे राष्ट्र के साहित्य की अमूल्य संपति हैं। भगवान राम और कृष्ण का चरित्र आदर्श के रूप में राष्ट्र के सामने हमेशा उपस्थित रहा है। यहीं से हमें भारतीय संस्कृति का सही ज्ञान मिल सकता है।

तीर्थ स्थानों के साथ व्यक्ति तथा समाज की आस्था, श्रद्धा तथा भावात्मक कड़ी समस्त समाज को जोड़ के रखती है और 'एकात्म' महसूस करवाती है। प्रायः दृष्टिगत होता है कि जिस स्थान पर कोई मेला लगता है उसके प्रभाव से हमारे मन में एक सांस्कृतिक श्रद्धा की भावना का परस्पर निर्माण हो जाता है। मेला हमारी पंरपरा को दर्शाता है और किसी ऐतिहासिक महापुरूष या घटना की स्मृति में लगा हो तो यह स्वतः ही हमारे जीवन का अंग बन जाता है। ऐसे स्थानों पर समस्त समाज को इकठ्ठा हम

[3] दीन दयाल उपाध्याय (खंड–1) विविधता में एकता

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

देख सकते हैं। पवित्र नदियों की पूजा त्यौहारों पर सपरिवार और सारे समाज का इकठ्ठे मिलकर खुशी मनाना हमारी संस्कृति का ही परिचायक है। प्राचीन काल से ही साधु–सन्यासी एक कोने से दूसरे कोने में जा कर उपदेश तथा राष्ट्रीयता का पाठ पढाते आए हैं। 'गांव और किसान का जोड़ भारत है। ऋषि 'मर्म' और कृषि 'कर्म' मिलकर प्राचीन भारतीय संस्कृति बने। अंग्रेंजों के कारण हम 'इंडिया' हुए और पश्चिमी संस्कृति की आंधी में 'इंडियन'।'[4] भारत सनातन काल से एक जन, एक संस्कृति, एक राष्ट्र है। इस बात को समझना हर एक सच्चे भारतीय के लिए अति–अवश्यक है।

भारतीय विचार के रूप में एकात्म मानव दर्शन

पश्चिम के जितने भी विचार हैं चाहे वो समाजवाद, पूंजीवाद, साम्यवाद हो उनमें कहीं न कहीं व्यक्ति व समाज में आपसी संघर्ष देखने को मिलता हैं। 'एकात्म मानव दर्शन' एक ऐसा विचार है जो यह दर्शाता है कि व्यक्ति और समाज में संघर्ष नहीं बल्कि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं और आपसी सहयोग की भावना रखते हैं। 'पश्चिम में हर चीज को टुकड़ों में देखने की आदत है जबकि हम सब बातों के संपूर्ण पहलूओं का विचार करते हैं। पश्चिम में सभी बातों में भेद है। वर्ग, भेद और संघर्ष ही उनका आधार है। हमनें इस संघर्ष और दुर्गण को आधार नहीं बनाया। हमारा आधार एकात्मता का है, सद्गुणों का है।'[5] एकात्म मानव दर्शन एक ऐसा विचार है, जिसमें व्यक्ति से लेकर समष्टि किसी का हित एक दूसरे से नहीं टकराता है। व्यक्ति कितना भी क्यों न बढ़ जाए जब तक उसका समाज उन्नत नहीं होता तब तक उसकी उन्नति का कोई अर्थ नहीं है।

व्यक्ति शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा सभी का समुच्चय है और व्यक्ति का विचार करते समय हम इन चारों का विचार करते हैं। समष्टि या समूह का विचार करते हुए भी इन चारों का विचार करना चाहिए। क्योंकि समूह का भी शरीर, मन, बुद्धि, और आत्मा से अटूट रिश्ता होता है। विश्व में आज समष्टि की सबसे बड़ी इकाई राष्ट्र है। अतः राष्ट्र की दृष्टि से भी विचार करें तो राष्ट्र के लिए चार बातों की आवश्यकता रहती है। प्रथम अवश्यकता है देश। 'देश 'भूमि' और 'जन' दोनों को मिलाकर बनता है।'[6] भारत में हम रहते हैं इसे हम मां मानते हैं। इसलिए यह देश है। दूसरी अवश्यकता है सबकी इच्छाशक्ति यानि सामूहिक जीवन का संकल्प। तीसरी एक व्यवस्था जिसे नियम या संविधान कह सकते हैं, इसके लिए हमारे यहां सबसे अच्छा शब्द प्रयुक्त हुआ है 'धर्म' और चौथी है जीवन आदर्श अर्थात संस्कृति। इन चारों को मिलाकर राष्ट्र बनता है। 'जिस प्रकार शरीर, मन, बुद्धि, और आत्मा के समुच्चय से व्यक्ति बनता है उसी प्रकार देश, संकल्प, धर्म और आदर्श के समुच्चय से राष्ट्र बनता है।'[7] एकात्म मानव दर्शन में व्यक्ति से लेकर समाज तथा राष्ट्र से विश्व तक का संपूर्ण विचार करने की क्षमता है।

[4] एकात्म मानववादः तत्व मीमांसा, सिद्धांत, विवेचन (राष्ट्रवाद की सम्यक अवधारणा)
[5] एकात्म मानवदर्शन, विवेचन (एकात्म मानववाद–6)
[6] अखंड भारतः साध्य और साधन पांच्चजन्य, अगस्त 24, 1953
[7] डा महेशचन्द्र शर्माः दीन दयाल उपाध्याय, कृतित्व एवं विचार

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

इस प्रकार व्यक्ति और समाज अलग–अलग नहीं हैं। अतः हमारे यहां व्यक्ति और समाज का संघर्ष नहीं है एक को मिटाकर दूसरा नहीं चल सकता। व्यक्ति और समाज दोनों साथ–साथ ही रहेंगे। इन दोनों को मिलाकर जो चीजें बनी वे चार 'पुरूषार्थ' कहलाते हैं। 'पुरूषार्थ केवल व्यक्ति के नहीं समाज अथवा राष्ट्र के भी होते हैं। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष चार पुरूषार्थ हैं। सामने से देखने पर कई बार एक ही वस्तु (पुरूषार्थ) सब कुछ दिखाई देती है। परंतु समझदार सोचता है कि इसके पीछे और भी कुछ है। इसी तरह किसी को केवल अर्थ और किसी को केवल धर्म ही सब कुछ लगने लगता है पर समझदारी इसी में है कि सभी पुरूषार्थ का विचार होना चाहिए।'[8] ये सब सदा परस्पर जुड़े रहते हैं। जैसे प्यास में रोटी से अधिक महत्व पानी का रहता है, भूख लगने पर रोटी का महत्व अधिक होता है। इसी प्रकार कभी 'अर्थ' का महत्व अधिक होता है तो कभी 'धर्म' का कभी 'काम' का अधिक तो कभी 'मोक्ष' का। अतः इन चारों पुरूषार्थ का एक साथ विचार हो।

वर्तमान समय में प्रांसगिकता

1965 में दीन दयाल उपाध्याय द्वारा 'एकात्म मानव दर्शन' का विचार समस्त देशवासियों व विश्व के समक्ष रखा गया। परंतु इसे विड़ंवना भी कहा जा सकता है कि देश में एक ऐसी सरकार वर्षों तक सत्ता में रही, जिसने इस विचार पर थोड़ा सा भी चिंतन नहीं किया। उसका एकमात्र कारण यही दिखता है कि दीन दयाल उपाध्याय एक अलग राजनीतिक संगठन का भी नेतृत्व कर रहे थे। यही कारण रहा कि इस विचार को समस्त जनता के समक्ष नहीं रखा गया और उस पर चिंतन भी नहीं किया गया। स्वतंत्रता के सात दशक बाद पहली ऐसी केंद्र सरकार आई है, जो इस विचार के अनुरूप सत्ता और समाज को साथ मिलाकर राष्ट्र को विकास की दिशा में ले जाने का काम कर रही है। यदि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात पंडित दीन दयाल उपाध्याय के विचारों को अपनाकर आगे बड़ा गया होता तो देश में आज आर्थिक, सामाजिक विषमता की स्थिति निर्मित नहीं होती। दीन दयाल जी का चिंतन बहुत स्पष्ट था, उनका मत था प्रकृति से मिलने वाली चीजें समाज के हर वर्ग तक पहुंचनी चाहिए। उसका दोहन करने की बजाय हमें उसका अवश्यकतानुसार उपयोग करना चाहिए।

हमारी संस्कृति को मिटाने के लिए आक्रमणकारीयों ने काफी प्रर्यत्न किए उनके द्वारा हमारी आत्मा पर प्रहार किया गया हमारे आदर्शों को मिटाने का प्रयास किया गया। अंग्रेजों द्वारा हमारी शिक्षा पद्धति को बदला गया और हमारे गौरवपूर्ण इतिहास के साथ भी छेडछाड की गई। वैदिक काल से आज तक हम अपने देश को एक समझते हैं। हमारे पूर्वजों ने अपने देश की अनेक प्रकार से वंदना की है। भारतीय संस्कृति की आत्मा गांवो में बसती है, गांवो की अवहेलना वर्तमान समय में एक बहुत बड़ी भूल मानी जा सकती है। गांवो को केंद्र मानकर, कृषि को बढ़ावा देना किसी भी सरकार का महत्वपूर्ण दायित्व होना चाहिए। वर्तमान समय की यह अवश्यकता है। आज जरूरत है कि सबसे पहले शिक्षा पद्धति को सुधारकर शिक्षा का भारतीयकरण किया जाए। बच्चों को भारत के महापुरूषों के जीवन से अवगत

[8] दीनदयाल, गुरूजी, ठेंगड़ी, एकात्म दर्शन, दीन दयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली

ISSN no. 2454-2695
Vol 7 Issue 6 June 2021

करवाया जाए। महाभारत, रामायण, वेद, उपनिषद के बारे में स्कूली स्तर से ही बच्चों को पढ़ाया जाना वर्तमान समय में अवश्यक हो गया है। आने वाली पीढ़ी को भारतीय संस्कृति से रू–व–रू करवाना अति अवश्यक हो चुका है।